अपिको: पश्चिमी घाट का चिपको आंदोलन

मधु व भारत डोगरा

8 सितंबर को अपिको आंदोलन के 25 वर्ष पूरे हो गए हैं। चिपको आंदोलन की तर्ज़ पर 8 सितंबर 1983 को उत्तर कन्नड़ ज़िले में सल्कानी के आसपास के गांववासियों ने पेड़ों से चिपककर उनकी रक्षा की थी। इस दिन को सह्याद्री दिवस या पश्चिमी घाट दिवस के रूप में मनाया गया है।

जिस तरह उत्तर भारत में हिमालय के वन पर्यावरण की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं, वैसे ही दक्षिण-पश्चिमी भारत में पश्चिमी घाट के वन यहां के पर्यावरण के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। पश्चिमी घाट पर्वत ृंखला को सह्याद्री पर्वतमाला भी कहा जाता है। ये पर्वत महाराष्ट्र में नासिक के पास आरंभ होते हैं व दक्षिण की ओर समुद्र तट के समानांतर बढ़ते हुए तमिलनाडु में कन्याकुमारी तक पहुंचते हैं। इस पर्वतमाला के ट्रॉपिकल वन अपनी जैव-विविधता के लिए विश्वविख्यात हैं। इस पर्वत ृंखला में कावेरी, कृष्णा व तुंगभद्रा जैसी महत्वपूर्ण नदियों का जल ग्रहण क्षेत्र है। यहां के वन, जल व मिट्टी संरक्षण, मानसून वर्षा व जलवायु बदलाव की गंभीर समस्या को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इनके साथ लाखों परिवारों की आजीविका जुड़ी है।

हाल के दशकों में पश्चिमी घाट के वनों पर कई-तरफा प्रहार हुआ है व कई कारणों से ये वन तेज़ी से सिमटते गए हैं। अब से लगभग 25 वर्ष पहले इन वनों को बचाने के लिए स्थानीय गांववासियों का एक अहिंसक आंदोलन आरंभ हुआ था जिसे 'अपिको' आंदोलन कहा गया। उत्तर भारत का चिपको आंदोलन तो बहुत चर्चित रहा है पर दक्षिण भारत के अपिको आंदोलन के बारे में लोगों तक अभी बहुत कम जानकारी ही पहुंच सकी है। यह आंदोलन भी चिपको आंदोलन की तरह ही वन बचाने का आंदोलन हैं व उतना ही प्रेरणादायक रहा है। वैसे इस आंदोलन के लिए प्रेरणा भी चिपको आंदोलन से ही मिली थी। चिपको की तरह कन्नड़ भाषा के अपिको शब्द का उपयोग भी पेड़ों की रक्षा के लिए उनसे चिपकने के अर्थ में किया गया।

कर्नाटक के एक होनहार युवा पांडुरंग हेगड़े ने हिमालय के चिपको आंदोलन को नज़दीक से देखा व उन्हें लगा कि उनके अपने ज़िले उत्तर कन्नड़ के गांवों को भी ऐसे ही आंदोलन की ज़रूरत है। यह क्षेत्र वैसे तो अपने वनों के लिए विख्यात था पर हाल के समय में यहां वन क्षेत्र कम होता जा रहा था। पांडुरंग ने यहां के गांववासियों को हिमालय के चिपको आंदोलन के बारे में बताना आरंभ किया। गांववासियों व पांडुरंग के कहने पर विख्यात चिपको नेता सुंदरलाल बहुगुणा भी इन गांववासियों से मिलने आए। यहां के गांववासियों को उनकी बातें बहुत प्रेरक लगीं। उन दिनों यहां भी कई स्थानों पर सरकार प्राकृतिक वन काटने के आदेश दे रही थी। कुछ स्थानों पर प्राकृतिक वन उजाड़कर उनके स्थान पर एक ही व्यापारिक प्रजाति के पेड़ लगाए जा रहे थे। गांववासियों ने चिपको आंदोलन से प्रेरित होकर इसका विरोध करने का निर्णय किया।

8 सितंबर 1983 को सल्कानी के आसपास के गांववासी कठिन मार्ग को पैदल तय कर कलासे के वन में पहुंचने लगे। उन्हें समाचार मिला था कि यहां पेड़ काटने के सरकारी आदेश हुए हैं। यहां ठेकेदार ने गांववासियों की बात मानने से पहले तो इंकार कर दिया व मज़दूरों से कहा कि पेड़ काटना जारी रखो, पर जब गांववासी कटने वाले

पेड़ों से चिपक गए तो मज़दूरों को काम रोकना पड़ा। अधिकारियों ने आकर गांववासियों से कहा कि इन पेड़ों को कटने दो क्योंकि सरकारी आदेश हो चुका है। पर गांववासी अपने निश्चय पर अडिग रहे व कठिन परिस्थितियों में लगभग 3 महीने तक जंगल में पहरा देकर उन्होंने वन की रक्षा की।

इस आंदोलन की खबर शीघ्र ही पूरे उत्तर कन्नड़ ज़िले में फैल गई और अनेक अन्य गांवों के लोग भी वनों की रक्षा के लिए आगे आने लगे। उसके बाद यह आंदोलन पड़ोस के कुछ ज़िलों जैसे कोडागू, दक्षिण कन्नड़, चिकमंगलूर व शिमोगा में भी फैलने लगा। इस विकेन्द्रित आंदोलन में स्थानीय नेतृत्व जगह-जगह पर उभरा व उसने ज़िम्मेदारी संभाली। उन्होंने स्थानीय स्तर पर ही थोड़े बहुत संसाधन जुटाकर आंदोलन का काम चलाया। मीडिया से भी अपिको को समर्थन मिलने लगा। वर्ष 1983 से 1989 तक कई तरह के उतार-चढ़ाव के बीच यह आंदोलन आगे बढ़ता रहा व पश्चिमी घाट क्षेत्र में हरे पेड़ों की कटाई पर रोक लगाने की मांग को बुलंद करता रहा।

अभी तक तो अपिको आंदोलन को अपने प्रयासों से जगह-जगह पर कुछ पेड़ों की कटाई रोकने में ही सफलता मिली थी, पर सात वर्षों के सतत् प्रयास ने अंत में सरकार को एक बड़ा नीतिगत फैसला लेने के लिए भी मजबूर कर दिया। वर्ष 1990 में कर्नाटक सरकार ने पश्चिमी घाट क्षेत्र में हरे पेड़ों की कटाई पर रोक लगाने की अपिको आंदोलन की मांग स्वीकार करते हुए एक आदेश जारी किया जो अब तक लागू है।

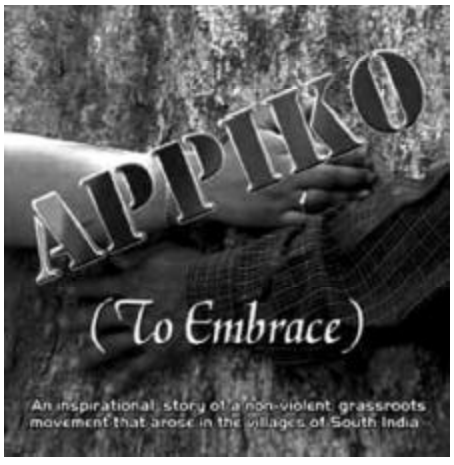

यह अपिको आंदोलन के लिए एक बड़ी सफलता तो थी, पर इसका अर्थ यह कतई नहीं था कि आंदोलन का कार्य समाप्त हो गया। इस आदेश का ठीक से पालन हो और इसे जारी रखा जाए, इसके लिए काफी प्रयास आगे भी करने पड़े। इस क्षेत्र में तेज़ी से आ रही अनेक परियोजनाओं के कारण भी अनेक पेड़ खतरे में पड़ रहे थे। लोगों के विस्थापन और पेड़ों के विनाश दोनों को रोका जाए या यह संभव न हो तो न्यूनतम किया जाए, इसके लिए भी प्रयास ज़रूरी था। अपनी सीमाओं के अंतर्गत व अन्य संघर्षों में जुड़कर अपिको आंदोलन ने यह प्रयास जारी रखा। अंधाधुंध खनन को रोकने, नदियों पर अनुचित निर्माण व नदियों के प्रदूषण को रोकने के लिए भी आंदोलन ने सक्रियता दिखाई। स्थानीय प्रजाति की मधु मक्खियों की रक्षा के लिए व शहद एकत्र करने जैसी वनवासियों की आजीविका की रक्षा के लिए भी अपिको आंदोलन ने काफी कार्य किया है।

अपिको आंदोलन से जुड़े अनेक गांववासियों ने अपने गांव की बंजर पड़ी ज़मीन को फिर हरा-भरा करने का सफल प्रयास भी किया है। विशेषकर उत्तर कन्नड़ ज़िले के सिरसी तालुका में ऐसे कई प्रयास देखे जा सकते हैं। लगभग 8000 एकड़ भूमि को इस तरह हरा-भरा किया गया है। इस प्रयास के अंतर्गत पौधों को पशुओं द्वारा चराई या चारा एकत्र करने के दबाव से मुक्त कर दिया जाता है। गांववासी स्वयं तय करते हैं कि किसी क्षेत्र में एक निर्धारित समय के लिए चराई नहीं होगी व कोई टहनी या पत्तियां नहीं काटी जाएंगी। आग से रक्षा के भी विशेष उपाय किए जाते हैं।

अब अपिको का प्रयास है कि पूरे पश्चिमी घाट क्षेत्र में वनों व पर्यावरण को बचाने के प्रयास तेज़ किए जाएं। 8 सितंबर को अपिको आंदोलन के 25 वर्ष पूरे हो गए हैं व इस दिन को सह्याद्री दिवस या पश्चिमी घाट दिवस के रूप में मनाया गया है। वास्तव में जलवायु बदलाव के इस दौर में पश्चिमी घाट के वनों व पर्यावरण को बचाना पहले से भी ज़्यादा ज़रूरी हो गया है। इस प्रयास को व्यापक समर्थन मिलना चाहिए। ***(स्रोत फीचर्स)***